संत शिरोमणि–रविदास

सौरभ कुमार (शोधार्थी)
शोधाथी
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़।

स्वामी रामानन्द के बारह प्रधान एवं प्रिय शिष्यों में से युगांतरकारी परम संत रविदास का नाम विशेष तौर पर लिखा जा सकता है। इनके अलावा, मध्य–युग के अन्य सन्तों में कबीर, गुरू नानक देव, नामदेव, दादू दयाल प्रभृत सन्तों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इन सन्तों ने जाति–पाति, धर्म, नस्ल, रंग–भेद से ऊपर उठकर जो विचारधारा स्पष्ट की है वह किसी राज्य, देश की सीमा से ऊपर विश्व–कल्याण की बात करती है। सन्त रविदास इन सन्तों में समाज में समझी जाने वाली सबसे निम्न कोटि की जाति चमार वर्ग से सम्बन्ध रखते थे लेकिन उनकी वाणी को देखकर ऐसा लगता है कि उनकी विचारधारा उच्च तथा मानव जाति हेतु अमृत के समान है जिसका प्रभाव तत्कालीन भारतीय समाज, धर्म, संस्कृति, राजनीति पर गहरे रूप में देखने को मिलता है। इनकी विचारधारा शास्त्र–ग्रन्थ आदि पर आधारित न होकर महात्माओं के व्यावहारिक ज्ञान, सत्संग तथा गुरू के उपदेशों की अनुभूतियों का परिणाम है, अर्थात सत्य की उपलब्धि के लिए वे धर्म ग्रन्थों के चक्र में नही पड़े बल्कि इन्होंने स्वनुभूति के बल पर विचार कर आनन्द की प्राप्ति की है। सन्तों की अनुभूति की अभिव्यक्ति सहज होने के कारण मानवीय चेतना की जिस गरिमा को लेकर चलती है वह चिन्तन से अधिक हृदय की रागत्मिकता वृति से सम्बन्ध है। इसलिए उनकी विचारधारा को किसी दार्शनिक सम्प्रदाय में आबद्ध करना उनके प्रति अन्याय है।

भक्ति की परम्परा उतनी ही प्राचीन है जितना की आदिम मनुष्य। **''जब संसार में कार्ल मार्क्स नहीं था, जब संसार में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का चिन्तन नहीं था, तब भी मुनष्य अन्याय के विरूद्ध लड़ता था और यह संघर्ष मध्यकाल के सन्तों में हमें दिखाई देता है।.... वे सब निम्न जातियों की मुक्ति के लिए उठे हुए स्वर थे। यह स्वर मानवता का स्वर था और भारत में भी वैष्णव चिन्तन इसका मूल था जिसने सबमें समन्वय फैलाने का यत्न किया।''**[1] जाति से चमार होने के बावजूद भी रैदास जी ने भक्ति मार्ग के जरिए मानवीय चेतना को समाने रखा। यही कारण है कि ''उनके समकालीन एवं गुरू भाई सन्त कबीर जी ने रविदास

जी को 'सन्तन में रविदास सन्त है' कहकर इसी तथ्य को स्पष्ट किया है। सन्त कबीर का ही यह वचन **निरवैरी निहकांमता, सांई सैती नेह। बिषियां सूं न्यारा रहे, संतन का अंग एह।।**
संत रविदास जी पर अक्षरशः चरितार्थ होता है।''[2]

प्रकारान्तर से सभी संतों ने समाज–कल्याण की मान्यता को स्वीकार किया था और अपने जीवन के आदर्शों तथा पथ में इसे उतारा था। कबीर ने भी अपनी वाणी का विस्तार समाज कल्याण के लिए किया था। संत चरणदास ने अपने गुरू के विचारों की श्रोतस्विनी जगत् की प्यास बुझाने के लिए प्रवाहित की थी। अस्तु, रैदास ने तत्कालीन समाज की पीड़ा को समझा था और व्यावहारिक रूप से उसका समाधान निकाल कर अपनी वाणी के माध्यम से उस समाधान को सामान्य जनता में प्रसारित किया। **''रविदास जी स्वभावतः मानवतावादी थे। आजकल के समाजसुधारकों की तरह प्रचारक नहीं थे। उन्होंने अनेक पदों में अपनी शोषित और दलित जाति को याद किया है। वे प्रभु–पारायण, जातियता के कट्टर विरोधी, मानव समानता के उदारवादी संत थे।''**[3]

पन्द्रहवीं शताब्दी एवं सोल्हवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में समाज–सुधारकों का एक ऐसा दल आविभूर्त हुआ जिसने सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र में सुधार करने के प्रयास किये। रविदास जी, उनके गुरु भाईयों, और स्वयं स्वामी रामानंद ने तत्कालीन भारतीय इतिहास, धर्म, राजनीति, एवं अर्थ–व्यवस्था पर गहरा प्रभाव छोड़ा था। ये महान संत चमकते हुए बाराह सूर्य थे जिन्होंने अधर्म, अज्ञानता एवं जड़ता की घोर अमावस्य में प्रकाश ही प्रकाश भर दिया था। संत रविदास का मध्ययुगीन महान संत–परम्परा में एक विशिष्ट स्थान

है। उन्होंने अपने धार्मिक, अध्यात्मिक एवं मानवतावादी विचारों के माध्यम से न केवल तत्कालीन समाज में एक नई चेतना अनुप्राणित की अपितु समाज को एक नई दिशा देने का श्रेयस्कर कार्य भी किया। संत रविदास के जीवनकाल (सन 1376 ई.–1496 ई.) के अंतर्गत सामाजिक, धार्मिक व राजनैतिक परिस्थितियां अत्यंत शोचनीय थीं। समाज विभिन्न जातियों व धर्मों में बंटा हुआ था, विभिन्न धार्मिक संप्रदायों में बाह्मडम्बरों, अंधविश्वास, कर्मकाण्ड, तथा मिथ्याचार का बोलवाला था। हिंदुओं में ब्राह्मणों का महत्व बढ़ने के कारण वे अपने पद व सामाजिक परिस्थिति का दुरुपयोग करने लगे थे। इस्लाम में भी कई कुनीतियां घर कर गईं थीं। आतंकवादियों के आतंक के कारण हिन्दुओं में असुरक्षा की भावना दिन–प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही थी। ऐसी परिस्थितियों से जूझते समाजने संत रविदास की संवेदना को गहराई से प्रभावित किया और उनकी वाणी तत्कालीन युग व समाज को नई दिशा प्रदान करने में पूर्णतय सार्थक सिद्ध हुई। उन्होंने तत्कालीन समाज की परिस्थितियों को आत्सात किया, उनको समझा और अपनी वाणी में उन समस्याओं का समाधान उस काल के सर्वश्रेष्ठ साधन धर्म के द्वारा दिया। वे एक आदर्श अंक्त एवं विचार के साथ–साथ तत्कालीन समाज के एक बहुत बड़े सुधारक भी थे, जिनकी वाणी ने समाज की तत्कालीन युग में एक समाधानपूर्ण विचारधारा दी थी। उन्होंने अपना समस्त जीवन आत्म–साधना करते हुए 'सर्वजन हिताय' तथा 'सर्वजनसुखाय' के लिए अर्पित कर दिया था। वे अपने भक्तिमय सशक्त व्यक्तित्व द्वारा निम्न वर्ग का ही नहीं, अपितु देश में फैली बुराइयों को मिटाकर सभी वर्गों के लोगों का उद्धार करना चाहते थे। उन्हें निर्भय बनाकर स्वच्छ, सुखी तथा स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने में समर्थ देखना व बनना चाहते थे। परम्परा से चली आ रही कुरीतियों एवं बुराइयों से समाज को छुटकारा दिलाना उनका परम लक्ष्य था। संत रैदास की धारणा है, **"जन्म से कोई प्राणी उच्च या नीच नहीं होता। मनुष्य नीच या उच्च कर्म से होता है। भगवान् की भक्ति करने वाला महान् है। 'हरि को भजे सो हरि का होई।"4** ओछी जाति में उत्पन्न हो कर भी अपने अच्छे कामों के कारण वे ऊँचे हो गये। हरि भक्ति ही उनके लिए अमूल्य हीरा थी और किसी की उन्हें चाह न थी। रैदास का जन्म चमार जाति में हुआ था लेकिन उन्होंने बड़े स्वाभिमान से इस तथ्य को स्वीकार किया और जाति–पाति के कुचक्र में पड़े समाज को अपने आदम्य साहस का परिचय दिया। उन्होंने कहा है ऊँचे कुल में जन्म लेने से मानव ऊँचा नहीं होता। अच्छे कर्म करने से ही ऊँचा होता है। **"उन्होंने स्वयं को बार–बार चमार कहा है। यह उनकी महानता का परिणाम है क्योंकि इष्ट के प्रति दीनता और विनम्रता से ही भक्ति का प्रसाद प्राप्त होता है।"5** सन्त रैदास के शब्दों में, **"जन्म जात कूं छांड़ि कर, करनी जात परधान। इह्यौ बेद कौ धरम है, करै 'रविदास' बखान।।"6** अर्थात जन्म के आधार पर किसी की जाति निश्चित करनेका सिद्धांत छोड़ देना चाहिए।

वर्तमान समय में संत रविदास के काव्य की मानवीय प्रासंगिकता एक दूसरे रूप में भी हमारे सामने आती है। **"कुछ मूल्य ऐसे होते है जो काल एवं स्थान से परे होते हैं। वे सदैव अनुकरणीय हैं। ऐसे मूल्यों को शाश्वत मूल्य कहते हैं। सत्य एक शाश्वत मूल्य है। कला शाश्वत मूल्यों की अभिव्यकित करता है और समाज में उनका प्रसार करता है। सामाजिक नियन्त्रण शाश्वत मूल्यों पर आधारित रहता है .... इस शाश्वत मूल्य से मानव व्यवहार सदैव से संचालित एवं प्रामाणित होता चला आया है।"[7]** मानवीय शाश्वतता की महागाथा रचने वाले संत रैदास की वाणी में उनकी परिस्थितिजन्य अनुभव कूट–कूट कर भरा हुआ है। यही कारण है कि संत रैदास आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने उस युग में थे।

संत रैदास में समाज को सुधारने की चेष्टा दूसरे ढँग से सामने आती है। वे कबीर की तरह आक्रमण वाणी से सुधार लाने की बात नहीं करते। वे अपनी वाणी में अत्यन्त विनम्रता से मनुष्य के मन का उस वृत्ति का परिष्कार करना चाहते हैं जिसके चलते कुरीतियाँ उत्पन्न होती हैं। वे बार–बार स्वयं को चमार कहकर अपनी वस्तुस्थिति से मुँह नहीं मोड़ते।

"मेरी जाति कमीनी, पाति कमीनी ओछा जनमु हमारा।
तुम सरणागति राजा रामचंद कहि रविदास चमारा।।"[8]

संत रविदास की वाणी में कहीं आक्रोश था बदले की भावना नहीं झलकती। इन विभाजक रेखाओं को पाटने के लिए उन्होंने सहज रास्ता अपनाया।

"रविदास राति न सोईये, दिवस न करिये स्वाद
अह निस हरि जी सुभारिये, छोड़ि सकल प्रतिवाद।"[9]

उनकी महानता को देखते हुए परमसंत राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने कहा था कि, **''रविदास जी ने अपने आप को मिटा कर दूसरों को जीवन–दान देना सिखाया था। मानवता के कल्याण के लिए स्वयं को कष्टों की भट्टी में जलाना रविदास जी का ही काम था। रविदास जी की प्रभु–भक्ति की तड़प हरिजनों के लिए प्रभु के मन्दिर के द्वार खुलवाने में थी। रविदास जी की अमृत–रस से भरी हुई वाणी जहाँ तपते हुए हृदयों को शीतल करने का काम देती है, वहाँ वही वाणी प्राणिमात्र के लिये समानता और बराबरी के द्वार खोलने वाली है।''**[10]

रविदास ने तत्कालीन समाज में फैले आडम्बरों व कर्मकांडों का खुलकर विरोध किया। भले ही उनका स्वर कबीर की तरह प्रहारात्मक नहीं है। तथापि वे मिथ्याचारी व आडम्बरों का निर्वाह करने वालों को पूर्णतया अस्वीकार करते हुए उनके जीवन को व्यर्थ व थोथा कहते हैं तथा नाम स्मरण को ही जीवन का सार मानते हैं–

थोथी काया थोथी माया, थोथा हरि बिन जनम गवाया।
थोथा पंडित थोथी बानी, थोथी हरि बिन सबै कहानी।।[11]
थोथा मंदिर भोग बिलासा, थोथी आन देव की आसा।
साचा सुमरन नांव बिसासा, मन बच कर्म कहै रविदासा।।[12]

उन्होंने अपनी वाणी के माध्यम से मध्यकालीन सामाजिक चेतना को एक नयी दिशा दी तथा अपने उच्च व सात्विक विचारों व उदात्त मूल्यों से तत्कालीन समाज को एक नया आलोक प्रदान किया। हर दृष्टिकोण से रैदास की वाणी में निहित मानवीय मूल्य प्रासंगिक हैं।

चौरह सौं तैंतीस की मादा खुदी पंदरास।
दुखियों के कल्याण हित प्रगटे श्री रविदास।।[13]

रविदास की भक्ति में मानव व्यवहार के संबंधों की व्याख्या 'समाज' के सम्बन्ध में हुई है। डॉ. योगेन्द्र सिंह लिखते हैं, **''रैदास जी की विचारधारा आज भी प्रचलित सामाजिक अन्तर्विरोधों एवं समस्याओं का समाधान निकालने में एक सीमा एक सहयोग दे सकती है। विशेषतः उनका जीवन, विचारधारा तथा अभिव्यक्ति शैली यदि आज के परिप्रेक्ष्य में समझी जाये तो आजकल के समाज सुधारकों एवं अग्रणी व्यक्तियों के प्रति वह पर्याप्त मागदर्शक बन सकती है। ..इन्हीं विशेषताओं ने उनको अपने युग का ही नहीं सदा सर्वदा के लिए एक महान् विचारक, चिन्तक तथा समाज सुधारक के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया है।''**[14] सही मायने में देखें तो संत रैदास समूची मानवता के प्रणेता बनकर उभरे हैं। वे दिखावा पसंद नहीं करते बल्कि नाम स्मरण के बाहरी धरातल पर नाम और नामी की एकता स्थापित करते हैं, अर्थात् पद और पदार्थ का ऐक्य घोषित करते हैं। पद और पदार्थ की एकता का आधार है प्रत्यय यानी विश्वास। रविदास इसी विश्वास की प्रतिष्ठा अन्धविश्वास के उच्छेद से करते हैं–

जहं अन्ध बिस्वास है, सत्त परख तहं नांहि।
'रविदास' सत्त सोई जानि है, जौ अनभउ होई मन मांहि।।[15]

एकमेक एक रस का विवेचन करते हुए वे कहते हैं–

धरम अधरम मोच्छ नहिं बंधन, जरा मरन भव नासा।
द्रिस्टि अद्रिस्टि गेय अरू ज्ञाता, एकमेक है रविदासा।।[16]

अस्तु, रविदास की वाणी में मानवता का स्वर एकता के रूप में भक्ति के रूप में, सामाजोत्थान और कल्याण भावना के रूप में उभरा है। उनकी अमृतवाणी हिंदी साहित्य की एक अमूल्य निधि है। वह सत्य सनातन धर्म की एक ऐसी अनुपम थाति है जिस पर हम गर्व कर सकते हैं।

रविदास ने माया को बड़ी विकट तथा प्रबल बताया है। यह झूठी माया सब को धोखा दे रही है और सारे संसार को त्रिविधताप में जला रही है। सन्त साहित्य में माया का मानवीकरण ठगिनी, डाकिनी, नागिन, अहेरिनि के रूप में किया है। सन्त रैदास के अनुसार **"माया मनुष्य को मोहित करती है और इसी मोह में मनुष्य अज्ञानी हो जाता है। इसलिए माया से आप्लावित पंचभूतात्मक संसार का परित्याग करके भगवान् की शरण में जाना ही श्रेयस्कर है। यह भौतिक प्रपंच दुःखों का कारण है।"**[17] काम, क्रोध, लोभ और मोह के कारण प्राणी दुःखी होता है। पुत्र–पुत्री तथा परिवार के अन्य सम्बन्धी भक्षण करते हैं। ये अपने स्वार्थों की सीमाओं में ही मनुष्य को घेरे रहते हैं। रैदास माया–ग्रस्त मन को कूप में पड़े मेंढक के समान बतलाते हैं।

माया ग्रस्त प्राणी 'मैं अरू ममता' में ग्रस्त हो जाता है और रैदास इसी भव चक्र से छुटकारा पाने के लिए प्रभु से प्रार्थना करते हैं। आशा आकांक्षा के भ्रम में पड़ कर मनुष्य हरि चरणों से विमुख रहता है। इसलिए सन्त रविदास का मानना है कि यह तृष्णा दिनोदिन जीवन का अपहरण करती रहती है। वे कहते हैं कि **"इस माया से मुक्ति पाने हेतु जीव को सेवा, सत्संग करने, गुरु की शरण में जाने, प्रभु का नाम स्मरण करने एवं पंच विकारों का त्याग करके निराकार प्रभु का ध्यान धारण करना पड़ेगा।"**[18] गुरु जी के ये सत्य वचन हृदय में धारण करें, इन्हें कभी अपने हृदय से टालें नहीं क्योंकि यह समस्त माया पोथी है, भक्ति ही काम आएगी। अतः भक्ति का प्रतिपालन करो, नाम स्मरण करो और गुरु पर पूर्ण निष्ठा बनाए रखो।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- *रांगेय राघव, ''संगम और संघर्ष'', किताबमहल प्रकाशन, प्र.स. 1953, पृष्ठ 12–13।*

2- *आचार्य पृथ्वी सिंह आज़ाद, ''युग प्रवर्त्तक संत गुरू रविदास''– दीपक पब्लिशर्ज़, जालन्धर, प्र.सं. 1983, पृ. 30*

3- *डॉ. मीरा गौतम, संत रविदास की निर्गुण भक्ति, निर्मल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्र.सं. 1998, पृ. 97*

4- *नीच ते ऊच कीओ मेरे सतिगुरु, डॉ. धर्मपाल सरीन, एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली पृ. 53*

5- *रविदास दर्शन, आचार्या पृथ्वीसिंह आज़ाद, अनुसंधान विभाग, श्री गुरु रविदास संस्थान, चण्डीगढ़, 1973 पृ. 126*

6- *डॉ. मीरा गौतम, संत रविदास की निर्गुण भक्ति, निर्मल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्र.सं. 1998, पृ. 98*

7- *तोमर एवं शर्मा, समाजशास्त्र के सिद्धान्त, श्रीराममेहरा एंड कम्पनी, आगरा, द्वितीय संस्करण, 1973, पृ. 287*

8- *संत रविदास, गुरू ग्रन्थ साहिब, पृ. 659*

9- *योगेन्द्र सिंह, संत रैदास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं. 1998, पद–32*

10- *दलित बंधु, रविदास अंक 1933, लाहौर*

11- *डॉ. बी.पी. शर्मा, संत गुरू रविदास वाणी, पृ. 90*

12- *डॉ. बी.पी. शर्मा, संत गुरू रविदास वाणी, पृ. 90–91*

13- *रविदास दर्शन, आचार्या पृथ्वीसिंह आज़ाद, अनुसंधान विभाग, श्री गुरु रविदास संस्थान, चण्डीगढ़, 1973, पृ. 164–165*

14- *योगेन्द्र सिंह, संत रैदास–लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं. 1998 पृष्ठ–117*

15- *रविदास दर्शन, आचार्या पृथ्वीसिंह आज़ाद, अनुसंधान विभाग, श्री गुरु रविदास संस्थान, चण्डीगढ़, 1973, पृ. 33*

16- *डॉ. बी.पी. शर्मा, संत गुरू रविदास वाणी, पद–28*

17- *नीच ते ऊच कीओ मेरे सतिगुरु, डॉ. धर्मपाल सरीन, एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली. पृ. 81*

18- *गुरु रविदास (जीवन एवं दर्शन), डॉ. धर्मपाल सिंहल, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ 1993. पृ. 137*